Dr. Parikshit Kr. Singh
Associate Prof.
Dept. of L.S.W.
SNSRKS college, Saharsa

श्रम विधान के सिद्धान्त

समाज में रहने वाले व्यक्तियों एवं उनके समूहों की क्रिया-कलापों, उनके प्रयासों को नियंत्रित करने, उस पर रोक लगाने एवं उनका मार्ग दर्शन करने के लिए शुरू से ही कोई-न-कोई यंत्र कार्य करता रहा है। इन यन्त्रों में धार्मिक नीतियाँ, परम्पराएँ, रूढ़ियाँ, रीति-रिवाज इत्यादि प्रमुख हैं। आधुनिक समाज के आगमन के साथ ही इन यंत्रों का सामाजिक क्रिया-कलापों पर प्रभाव कम पड़ने लगा। जिसका असर समाज की आर्थिक एवं सामाजिक संरचना पर पड़ना शुरू हुआ। ऐसी स्थिति में राज्य के लिए यह आवश्यक हो गया कि सामाजिक हितों की रक्षा के लिए किसी अन्य यंत्र का विकास करें और यहीं से सामाजिक विधान का इतिहास शुरू हुआ।

सामाजिक या श्रम विधान बनाने के पीछे यह पूर्व कल्पना होती है कि नियंत्रित समाज में व्यक्ति या समूह अपनी स्वार्थपूर्ति में व्यक्ति विशेष या समूह का अहित कर जाते हैं, जिसका बहुत ही व्यापक असर सामाजिक संरचना पर पड़ता है। ऐसी स्थिति में सामाजिक या श्रम विधान व्यक्तियों एवं व्यक्तियों के समूहों की क्रिया-कलापों को नियंत्रित कर मार्ग दर्शित करता है एवं क्रिया-कलापों को समाज हितकारी बनाता है। इस प्रकार, यह कहा जा सकता है कि राज्य द्वारा समाज में रहने वाले

Scanned with CamScanner

व्यक्तियों, उनके समूहों, वर्गों आदि की क्रिया-कलापों को नियंत्रित करने, सामाजिक न्याय दिलाने, समानता विकसित करने एवं सुरक्षा प्रदान करने के लिए बनाया गया कोई भी विधान सामाजिक विधान है। श्रम विधान भी सामाजिक विधान का ही एक अंग है। सामाजिक विधान का प्रभाव समाज के प्रत्येक सदस्यों पर पड़ता है जबकि श्रम विधान का प्रभाव श्रमिक, नियोक्ता एवं उनकी संयुक्त क्रिया-कलापों से संबंधित व्यक्तियों पर पड़ता है।

श्रम विधान के सिद्धांत :- लगभग सभी देशों का श्रम विधान निम्नलिखित सिद्धांतों पर आधारित होता है।

(1) सामाजिक न्याय
(2) सामाजिक समानता
(3) अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था
(4) अन्तर राष्ट्रीय एकरूपता

(1) सामाजिक न्याय – सामाजिक न्याय में दो बातों को शामिल किया जाता है। एक तो उद्योग के लाभों तथा अन्य फायदों का उद्योग के स्वामी तथा श्रमिकों में समान वितरण करना तथा दूसरे श्रमिकों के जीवन, सुरक्षा तथा स्वास्थ्य पर पड़ने वाले कार्यकारक प्रभावों के विरुद्ध प्रबन्ध करना। शुरू में श्रमिक की स्थिति दैनिक भुगतान

Scanned with CamScanner

पर निर्भर करती थी। कहने का तात्पर्य यह है कि उसे उतने ही दिन की मजदूरी दी जाती थी जितना दिन वह कार्य करता था। कार्य के दौरान उत्पन्न हुई सभी समस्याओं का सामना करना श्रमिकों के लिए आवश्यक था। कार्य के दौरान श्रमिकों को किसी प्रकार की दुर्घटना का सामना करने पर उसकी क्षति के लिए उसे किसी प्रकार का हर्जाना नहीं मिलता था, परंतु श्रमिक क्षतिपूर्ति अधिनियम 1923 पारित होने के बाद से श्रमिकों को किसी भी दुर्घटना के कारण हुए हानि के लिए क्षतिपूर्ति लेने का अधिकार प्राप्त हो गया। न्यूनतम मजदूरी अधि-नियम, कारखाना अधिनियम, मजदूरी भुगतान अधिनियम इत्यादि अधिनियम सामाजिक न्याय के सिद्धांत पर ही आधारित है। इन अधिनियमों के द्वारा श्रमिकों को न्यूनतम मजदूरी दिलाने, उसके कार्य के घंटे को निश्चित करने, स्वास्थ्य एवं कल्याण संबंधी सुविधाएँ पहुँचाने की गारंटी दी जाती है। सामाजिक न्याय शब्द की परिभाषा औद्योगिक विवाद अधिनियम 1947 को छोड़कर अन्य किसी भी अधि-नियम में नहीं दी गयी है। माननीय न्यायाधीश श्री राजेन्द्र अडकर के अनुसार, "The concept of social and economic, Justice, isa living concept of revolu-tionary import, it gives sustenance to the rule of law and significance to the ideal of welfare state."

भारतीय संविधान में सामाजिक न्याय को राज्य का एक मुख्य उद्देश्य माना गया है। संविधान की धारा 38 के अनुसार, "राज्य जनता के लिए सामाजिक, न्यायिक एवं आर्थिक पहलुओं को सामाजिक आदेश के रूप में सुरक्षित एवं निश्चित करने के लिए बाध्य है।" धारा 39 में कहा गया है कि यह राज्य का दायित्व होगा कि कानून बनाने में सामाजिक न्याय के सिद्धांत का पालन करे।

सामाजिक हित के दृष्टिकोण में सामाजिक न्याय एक न्याय है। सामाजिक न्याय वास्तव में संविधान के द्वारा प्रदान किए गए मूलभूत अधिकारों का सहायक है। सामाजिक न्याय का तात्पर्य यह नहीं है कि वह श्रमिकों के कल्याण के लिए सभी कुछ करे और नियोक्ताओं की अवहेलना करे। वास्तव में सामाजिक न्याय दोनों पक्षों को समान न्याय दिलाने का एक संतुलित सिद्धांत है। सामाजिक न्याय अब अधिकांश कानूनों का अविच्छिन्न भाग बन गया है। इसका आधार है समाज में सामाजिक, आर्थिक विषमताओं को दूर करना एवं समान अवसर प्रदान करना।

(2) सामाजिक समानता – सामाजिक न्याय के आधार पर बनाएँ गए किसी भी कानून में भविष्य के लिए निश्चित मानदण्ड स्थापित करने पर बल दिया गया है। यह मानदण्ड वर्तमान एवं भूतकाल की व्यवस्था को ध्यान में रखकर तय किया जाता है। अगर यह मानदण्ड विधान

Scanned with CamScanner

अंतर्गत तय कर दिया जाता है, तो वह तबतक लागू रहता है जबतक उसे हटाने के लिए कोई अन्य कानून न बनाया गया हो। अगर ऐसा महसूस किया जाने लगा है कि यह कानून अब समाज के हितों की रक्षा के लिए एवं अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए सक्षम नहीं है, तो कानून हटाने के लिए सरकार को अधिकार देता है एवं कि वह नई परिस्थितियों का सामना करने के लिए नया कानून को सक्षम बनाने के लिए नियम का निर्माण करे। ऐसे भी सभी कानून सामाजिक समानता पर आधारित होते हैं। सामाजिक समानता के सिद्धान्त पर आधारित भारतीय कानून समान मजदूरी अधिनियम यह दर्शाता है कि समान कार्य के लिए समान मजदूरी का भुगतान अवश्य किया जाए। भारतीय संविधान में यह बात कही गयी है कि सभी लोगों के लिए समान अवसर प्रदान किये जाय। सरकार का यह दायित्व है कि वह समाज में फैली सामाजिक-आर्थिक असमानता को दूर करे और मानव को भौतिक सुख-सुविधाओं को समान रूप में भोगने का मौका दे।

(3) राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था - श्रम विधानों का एक और महत्व पूर्ण सिद्धान्त है राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को ध्यान में रखना। सभी विधानों के निर्माण में देश की अर्थव्यवस्था को ध्यान में रखा जाता है। अगर विधानों का निर्माण में राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था को मद्देनजर न रखा जाय, तो हो सकता है कि वह विधान देश और समाज के लिए खतरनाक साबित हो। उदाहरण - स्वरूप अगर मजदूरी भुगतान अधिनियम को देश

Scanned with CamScanner

एवं उद्योग की भुगतान क्षमता को ध्यान में रखकर न बनाया जाय, तो हो सकता है कि मजदूरी की बढ़ी हुई दर के कारण बहुत-से उद्योग दिवालिया हो जायें और इससे घोर बेरोजगारी उत्पन्न हो। इसी तरह अगर राष्ट्र की माँग अत्यधिक उत्पादन की हो और विधान उत्पादन को कम करने के लिए पारित कर दिया जाय, तो इससे देश की अर्थव्यवस्था पर आघात पहुँचेगा।

(4) अन्तर राष्ट्रीय एकरूपता : अन्तर्राष्ट्रीय एकरूपता के सिद्धान्त के अन्तर्गत यह व्यवस्था की जाती है कि श्रम के लिए सभी बातों के संबंध में एक न्यूनतम स्तर की व्यवस्था की जा सके ताकि राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विषमता न हो।

अन्तर्राष्ट्रीय एकरूपता का तात्पर्य यह है कि श्रम या समाज के अन्य व्यक्ति को हर हालत में मानव हैं, उनकी मूल भूत आवश्यकताएँ समान हैं। यह हो सकता है कि स्थान परिवर्तन, वातावरण परिवर्तन से आवश्यकताएँ घट-बढ़ सकती हैं, लेकिन मूल-भूत आवश्यकताओं में अन्तर नहीं होता है। अतः इस स्थिति में विधानों को इसी आधार पर होना चाहिए जिससे कि अन्तर राष्ट्रीय एकरूपता कायम हो और मानव की आवश्यकताओं की पूर्ति की जा सके। अन्तर-राष्ट्रीय श्रम संगठन (I.L.O) की स्थापना इसी आधार पर की गई है। इसी के सुझावों एवं आदेशों के आधार पर आज भारत में एवं विश्व में बहुत-से अधिनियम बने हैं और बन रहे हैं। इस संस्था ने श्रमिक कल्याण, सुरक्षा एवं कार्य की दशाओं को सुधारने के लिए बहुत सारे अधिनियमों को पारित करने में सहायता दी है।

इस प्रकार उपर्युक्त चार सिद्धांतों के आधार पर किसी भी देश में श्रम या सामाजिक विधान का निर्माण किया जाता है।

Scanned with CamScanner